REVIEW OF RESEARCH
IMPACT FACTOR : 5.7631(UIF) UGC APPROVED JOURNAL NO. 48514 ISSN: 2249-894X
VOLUME - 8 | ISSUE - 1 | OCTOBER - 2018

बिहार में जल नियोजन की समस्या (1950–2000)

मनोज कुमार
शोध छात्र, स्नातकोत्तर इतिहास विभाग, ल० ना० मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा.

सार

उत्तर बिहार के अठारह जिलों के कुल 25,000 वर्गमील में फैले मिथिला में पूरब से पश्चिम तक पंद्रह प्रधान नदियाँ बहती है, जबकि अन्य अनेक सहायक नदियाँ है। मिथिला की पश्चिम सीमा गंडक नदी है और इसके दक्षिण गंगा नदी बहती है, जबकि पूरब में मिथिला परिक्षेत्र का विस्तार महानंदा नदी तक है। मिथिला के अन्दर बहने वाली प्रमुख नदियों में कोसी, कमला, बलान, बागमती, धेमुड़ा, बूढ़ी गंडक, खिरोई लखनदेई, जीवछ आदि के नाम उल्लेखनीय है। इनमें से कुछ नदियाँ गर्मी के मौसम में पतले नाले सी दिखाई पड़ती है, कुछ में पूरे वर्ष पानी की धारा बहती है और कुछ तो साल में चार–पाँच महीने लगभग सूख ही जाती है।। किन्तु एक समानता इनमें है और वह यह कि मानसून की चर्चा के बाद ये नदियाँ प्रचंड रूप धारण कर लेती है, इनमें पानी का जबर्दस्त उफान आता है और ये प्रबल वेग से बहने लगती ही नही, बल्कि सम्पूर्ण मिथिला को जलप्लावित कर जन–जीवन को अस्त व्यस्त और संत्रस्त कर देती है। इस नदी मातृक भूभाग का औसतन 76 प्रतिशत क्षेत्रफल प्रतिवर्ष बाढ़ में डूब जाता है और औसतन साठ लाख लोग बेघर–बार हो जाते है तथा भुखमरी तथा महामारी से पीड़ित होते हैं। बाढ़ की विभीषिका के कारण लगभग जुलाई से सितम्बर तक न केवल यहाँ की आर्थिक गतिविधि अस्त–व्यस्त रहती है, बल्कि इनसे सामान्य जन–जीवन भी प्रभावित होता है। इस तरह प्रतिवर्ष बाढ़ के रूप में विशाल जलराशि, मिथिलावासियों पर कहर ढ़ाती अन्ततः समुद्र के खाड़े जल मे विलीन हो जाती है। 19वीं सदी के उत्तरार्द्ध से ही मिथिला की इन उच्छृंखल नदियों को नियंत्रित करने और इनके द्वारा लाये जाने वाले अकूत जल भंडार का नियोजित उपयोग करने के लिए गंभीर विमर्श प्रारंभ हुआ। इसके लिए सेमिनारो–संगोष्ठियों, के आयोजन, विशेषज्ञ समितियों के गठन, सर्वेक्षणों एवं प्रतिवेदनों और जन आन्दोलनों का एक लम्बा दौर चला और समस्या अतिगंभीर, संवेदनशील तथा विवादास्पद होने के कारण ये आज भी जारी है और भविष्य में भी तब तक जारी रहने की संभावना है, जब तक कि मिथिला की नदियों के जल को नियोजित कर इसे अभिशाप से वरदान के रूप में नही परिवर्तित कर लिया जाता है।

आजादी के बाद मिथिला की प्रमुख नदियों को नियंत्रित कर इनकी जलों का सिंचाई एवं पनबिजली उत्पादन के लिए नियोजित करने के उद्देश्य से क्रमशः कोसी, गंडक, कमला, बागमती और अधवारा समूह की नदियों पर जलाशय और तटबंध बनाए गए और इनसे नहरे निकाली गई। अन्य छोटी–छोटी नदियों को भी बांधा गया। सरकार के साथ–साथ बाढ़ प्रभावित इलाके के लोगों ने इन्हें पूरा करने के लिए 20वीं सदी के उत्तरार्द्ध में अनथक प्रयत्न किए। सरकार ने अरबों रूपये खर्च किए, असंख्य लोगों ने भारी श्रमदान दिया। लेकिन 50 वर्षो के भगीरथ प्रयत्नों का परिणाम क्या हुआ? तटबंधों के अन्दर के लाखों लोग उजड़ गए, उनके पूनर्वास की समुचित व्यवस्था नही हुई और वे दर–दर भटकने के लिए मजबूर हो गए। नहरें बनी, लेकिन उनमें सिंचाई के लिए यथेष्ट पानी ही नही आया। जलाशय भी बने, लेकिन पनबिजली का उत्पादन नहीं हो सक। तटबंध बने, लेकिन बाढ़ का कहर घटने के बजाय बढ़ता चला गया। 1952 में 25 लाख हेक्टर भूमि बाढ़

प्रभावित थी, वही 1994 में यह बढ़कर 68.9 लाख हेक्टर भूमि हो गयी और इसका विस्ताार निरंतर जारी है। 2004 में उत्तर बिहार अर्थात मिथिला का शायद ही कोई जिला बचा, जिसने बाढ़ की त्रासदी को नही भोगा।

ज्यों–ज्यों बाढ़ की विभीषिका बढ़ती गई, जल के समुचित नियोजन के सवाल पर भूपरिस्थितिकी एवं जल विज्ञानियों, अभियंताओं, पर्यावरणविदों, भूगोलवेत्ताओं, कृषि एवं मौसम वैज्ञानिकों और अन्य तकनीकी विशेषज्ञों के बीच बहस भी सरगर्म होता गया। इस बहस में राजनेता, नौकरशाह और सामाजिक कार्यकर्त्ता भी बढ–चढ़ कर हिस्सा लेते रहे है और जल नियोजन की नीतियों को प्रभावित करते रहे हैं। दिनेश कुमार मिश्र, मेधा पाटकर, भोगेन्द्र झा, रामचन्द्र खाँ आदि ने इस बहस को परस्पर विरोधी आन्दोलन मे परिणत कर दिया है। जलाशय–तटबंध बनाओं बनाम इन्हें तोड़ो, नदियों को बाँधों बनाम मुक्त करो, जल को नियोजित करो बनाम जल के साथ जीना सीखो आदि नारों ने आज मिथिलावासियों को न केवल दो खेमों में बाँट दिया है, बल्कि एक न समाप्त होने वाली दुविधा में डाल दिया है। 20वीं सदी के उत्तरार्द्ध में मिथिला मे जल–नियोजन की समस्या और इसके निराकरण के लिए किए गए प्रयत्नों का शोधपरक आलोचनात्मक अध्ययन इस दुविधा और संशय से मुक्ति में सहायक हो सकता है।

अथाह नदी जल से अभिशप्त मिथिला वर्षा के जल से भी पीड़ित रहा है और उसके भी समुचित नियोजन की समस्या सदैव बनी रही है। मिथिला, में प्रतिवर्ष औसतन 54 इंच वर्षा होती है। जून–अक्टूबर में 48 इंच, नवम्बर–फरवरी में 1.5 इंच और मार्च–मई मे 4.5 इंच। वर्ष में प्रायः 55 से 65 दिन वर्षा होती है। परिणामतः पिछले दस हजार वर्षो से मिथिला में झीलनुमा छोटे–बड़े असंख्य ऐसे चौरो का जाल फैला हुआ, जिनमें कुछ में तो पूरे वर्ष पानी का जमाव रहता है, बाकी में सात से दस महिने तक पानी जमा रहता है। इस जल जमाव के कारण मिथिला की लाखों हेक्टयर जमीन का कोई उपयोग नहीं हो पाता। आमतौर पर सात से दस महीने तक जल जमाव वाले चौरों में जैसे–तैसे अगहनी मोटे धान की फसल किसान उगाने की कोशिश करते है, लेकिन बाढ़ का प्रकोप जब–तब उनके प्रयत्नों को नाकाम करता रहता है। इनका जल आधारित खेती अथवा मत्स्य पालन में उपयोग किया जा सकता था, किन्तु इस दिशा में नियोजित प्रयत्न कभी किए नहीं गए। जाहिर है कि न केवल बाढ़ से बल्कि जल जमाव की समस्या से भी मिथिलावासी त्रस्त रहते हैं। विडम्बना तो यह है कि जहाँ एक ओर मिथिला जल की अधिकता और इनके कहर से त्रस्त है, वही सुखाड़ के प्रकोप से भी पस्त है। परिणामतः प्राकृतिक आपदा मिथिला की स्थायी नियति बन गई, परंतु यदि उपलब्ध जल सम्पदा का सही नियोजन एवं प्रबंधन किया जाय तो यह अभिशाप वरदान में बदल सकता है। मिथिला की इस व्यथा–कथा की ग्वेषणा जरूरी है, जिस पर प्रायः साढ़े चार करोड़ मिथिलावासी का भविष्य निर्भर है।

मिथिला में बाढ़, सिंचाई, जलजमाव, जल–विद्युत उत्पादन और जलाधारित कृषि की समस्या पर अनेक शोध परक अध्ययन किए गए है और इस विषय पर अनेक पुस्तक एवं आलेख लिखे गए है। ऐसे अध्ययनों एवं पुस्तकों में दिनेश कुमार मिश्र की वन्दिनी महानंदा एवं बाढ़ से त्रस्त एवं सिंचाई से पस्त भोगेन्द्रे झा की River Management of Flood[Drought and Power Shortage in Bihar, पी० सी० घोष की A Comprehensive Treatise on North Bihar Flood Problems, हेमन्त–रणजीव की जब नदी बंधी, ललितेश्वर मलिक की कोसी, प्रवीण सिंह की The Colonized River's of North Bihar: Colonlal Intervention in Irrigation and Flood control, 1880-1940, पी० दयाल की Bihar in Maps आदि के नाम उल्लेखनीय है, जिनमें बाढ़–सिंचाई और जलविद्युत उत्पादन की समस्याओं पर विचार किया गया है, परंतु ये ऐतिहासिक अध्ययन न होकर या तो सिर्फ विषय से संबंधित आँकड़े उपलब्ध कराते है अथवा जल नियोजन पर चल रहे लम्बे विवाद में किसी कोई एक पक्ष लेते है। अतः अध्ययन अवधि में जल नियोजन की समस्या के ऐतिहासिक विवेचन के लिए सूचना एवं अलग–अलग दृष्टियों की जानकारी हासिल करने के लिए ये पुस्तके उपयोगी तो है, परंतु अपने आप में प्रस्तुत विषय का ऐतिहासिक अध्ययन नहीं है। इसी प्रकार इस विषय पर गठित समितियों, आयोजित सेमिनारों और किए गए सर्वेक्षणों की कार्यवाहियों तथा प्रतिवेदनो के रूप में विलुप्त साहित्य उपलब्ध है। ऐसे साहित्य में राष्ट्रीय बाढ़ आयोग के प्रतिवेदनों, बिहार सरकार के सांख्यिकी, सिंचाई, सहाय एवं पुनर्वास, जल संसाधन आदि विभागों की कार्यवाहियों एवं प्रतिवेदनों आदि आँकड़े के लिहाज से उपयोगी है। जाहिर है कि विषय से सम्बद्ध उपलब्ध साहित्य से आँकड़े और तथ्य प्राप्त हो सकते है तथा विषय पर जारी बहस की दलीलों को जाना जा सकता है, परंतु अब तक इनका समेकित समग्र अध्ययन नहीं किया जा सका है। अतः यह शोध का एक मौलिक विषय है।

मिथिला को 'मिट्टी और पानी' का देश कहा जाता है। जल को जीवन कहा गया है, परंतु मिथिला में यह 'जीवन' जहर का रूप धारण कर इसकी तबाही और बर्बादी का कारण रहा है। प्रस्तुत शोध कार्य का उद्देश्य 'जहर' बन चुके जल की समस्या का ऐतिहासिक विश्लेषण करना है ताकि इस तथाकथित 'जहर' को सही अर्थो में जीवन में परिवर्तित किया जा सके। प्रस्तुत शोध कार्य प्रासंगिक ही नहीं अपितु मिथिला के वर्त्तमान और भविष्य को जानने तथा संवारने की दृष्टि से अपरिहार्य भी है। वर्त्तमान मिथिला में व्याप्त गरीबी–बीमारी, बेरोजगारी और पिछड़ेपन की ज्वलन्त समस्याओं का निराकरण जल नियोजन की भीषण एवं ज्वलन्त समस्या के कारगर निदान पर ही निर्भर है और इसमें इसका ऐतिहासिक अध्ययन सहायक सिद्ध हो सकता है। अपार जल सम्पदा से सम्पन्न मिथिला को कंगाली और बदहाली से उबारने की यदि सम्यक जल नियोजन पहली शर्त्त है तो इस समस्या के आलोचनात्मक ऐतिहासिक अध्ययन से निःसंदेह एक वैज्ञानिक दृष्टि विकसित की जा सकती है।

प्रस्तुत शोध पत्र का मुख्य अध्ययन क्षेत्र मिथिला की भौगोलिक संस्कृति है। चूंकि जल नियोजन की समस्या कुछ तो मिथिला की भूपरिस्थितिकी से जुड़ी है और कुछ राजनेता–नौकरशाही–ठेकेदार संश्रय से, अतः भौगोलिक प्राकृतिक पक्ष के साथ–साथ इसके प्रबंधन पक्ष का अध्ययन भी आवश्यक होगा। इसके साथ ही यह समस्या न केवल मिथिला के आर्थिक जीवन से सम्बद्ध है, बल्कि इसके सामाजिक–राजनीतिक आयाम भी है। पुनः कभी–कभी इस बात का संशय भी किया जाता है कि भूमंडलीकरण के पैराकारों की एक गहरी साजिश के तहत जलाशयों, तटबंधों तथा जल नियोजन के लिए अब तक खड़े किए गए पूरे ढ़ांचे को तबाह करने के उद्देश्य से इन्हें ध्वस्त करने के उद्देश्य से तथाकथित पर्यावरणविदों एवं सामाजिक कार्यकर्त्ताओं द्वारा प्रकृति के साथ सहजीवन जैसे लुभावने नारे को उछाला जा रहा हैं अतः अध्ययन क्षेत्रा के अन्तर्गत वैश्विक परिप्रेक्ष्य में 20वीं सदी के उत्तरार्द्ध में जल नियोजन की समस्या और इससे सम्बद्ध भौगोलिक, सामाजिक–आर्थिक, तकनीकी तथा राजनीतिक आयामों का अध्ययन अपेक्षित होगा।

प्रस्तावित शोध कार्य को पूरा करने के लिए अन्तर–अनुशासनात्मक पद्धति उपयुक्त होगा। समस्या मूलतः प्राकृतिक है, अतः भौगोलिक ज्ञान का होना जहाँ जरूरी है, वही सर्वेक्षणात्मक तरीकों का अवलम्बन करना भी आवश्यक होगा। समस्या के आयतन तथा स्वरूप का विवेचन सांख्यिकी की सहायता से ही किया जा सकता है। फिर समस्या बहुआयामी है, अतः इसके अध्ययन के लिए भी बहु–अनुशासनात्मक पद्धति का अवलम्बन अपेक्षित होगा। परन्तु सभी पद्धतियों का सहारा इतिहास अध्ययन के कठोर अनुशासन में विषय का ऐतिहासिक आलोचनात्मक अध्ययन के लिए ही किया जाएगा।

प्रस्तावित अध्ययन विषय पर भरपूर स्रोत सामग्रियाँ उपलब्ध है। बाढ़ नियंत्रण, सिंचाई प्रबंन्ध, जल विद्युत उत्पादन, राहत पुनर्वास और नदी जल परियोजनाओं की कार्यवाहियों एवं प्रतिवेदनों, केन्द्र तथा राज्य सरकारों की इस संबंध में समय–समय पर की गई नीतिगत घोषणाओं, परियोजनाओं के क्रियान्वयन तथा केन्द्रीय एवं प्रान्तीय व्यवस्थापिका सभाओं में हुई बहसों से संबंधित अधिसूचनाओं, कार्यवाहियों एवं दस्तावेजों और अब तक हुए महत्वपूर्ण सेमिनारों की कार्यवाहियों के रूप विपुल स्रोत–सामग्री उपलब्ध है। इनके अतिरिक्त जल नियोजन से संबंधित विशेषज्ञों तथा अध्ययनकर्त्ताओं के आलेख पत्र–पत्रिकाओं, सामयिकी एवं समाचार–पत्रों में प्रकाशित होते रहे है, जिनका बहुमूल्य स्रोत के रूप में उपयोग किया जा सकता है। प्रस्तुत विषय के विविध आयामों पर कई महत्वपूर्ण शोध–कार्य भी हुए है, जिनमें कुछ प्रकाशित और कुछ अप्रकाशित है, जिनसे महत्वपूर्ण आँकड़े उपलब्ध होने की पूरी संभावना है। यह ज्वलंत समस्या सीधे समाज और धरती से जुड़ा है अतः क्षेत्र सर्वेक्षण द्वारा भी बहुमूल्य आँकड़े जुटाये जा सकते है। जाहिर है कि शोध कार्य को सम्पन्न करने के लिए यथेष्ट स्रोत सामग्री उपलब्ध है।

प्रस्तावित शोध कार्य इस संकल्पना पर आधारित है कि 20वीं सदी के उत्तरार्द्ध मे जल नियोजन की समस्या को मूलतः प्राकृतिक होने के बावजूद इसके निराकरण के लिए अपनाए गए अविवेकपूर्ण, अदूरदर्शी एवं अवैज्ञानिक उपायों ने इसे विकराल बना दिया। आजादी के बाद भारत में विकसित लूट की संस्कृति ने प्रकृति के एक बहुमूल्य उपहार जल को मिथिला के विकास के बजाय विनाश का पर्याय बना दिया।

प्रस्तुत शोध परियोजना में निम्नलिखित अध्याय होंगे–

अध्याय–1 : प्रस्तावना
अध्याय–2 : मिथिला की भौगोलिक संरचना और जल स्रोत
अध्याय–3 : बाढ़–सूखा और सिंचाई की समस्या
अध्याय–4 : नदी जल परियोजना
अध्याय–5 : जल नियोजन की समस्या के सामाजिक–आर्थिक और राजनीतिक आयाम
अध्याय–6 : जल नियोजन की समस्या पर बहस
अध्याय–7 : निष्कर्ष

संदर्भ स्रोत

1. C.M. Fisher, Indigo Plantation and Agrarian Society in North Bihar in the Nineteen and Early Twentieth Century, (Ph. D. Diss), Cambridge University Press, Cambridge, 1976
2. Tubewell and Ground water resources, Central Board of Irrigation and Power Publication No. 69, New Delhi, 1961.
3. G.D. Agrawal, Proceedings of the Second Delegates Conference of Badh Mukti Abhiyan, Nirmali, Bihar, 1997.
4. The strategy for talking the flood, drainage allied problems in North Bihar Secretariat Press, Patna. 1977.
5. Flood Atlas of North Bihar. Vol. I & II. Patna, 1966.
6. Gandak Project, River Valley Project, Patna, 1956.
7. The Kosi Project, River Valley Project, Patna, 1956.
8. Flood Problems in Bihar and Their Control, Deppt. of Irrigation & Electricity, Patna, 1977

पुस्तक:

1. Ajay Dixit and Deepak Gaywali, Dakshin Asia ma Paani ko artha Ranjniti Neetigat Samasya ra Prastavhru (in Nepali) Nepal Water Conservation Foundation, Kathmandu, 2000)
2. Akhil Gupta, Postcolonial Developments: Agriculture in the Making of Modern India. OUP, New Delhi, 1998.
3. Ajit Mazoomdar, Bihar: Problems of Development, Centre of Police Research, New Delhi, july, 1990.
4. Bhogendra Jha, River Management of Flood, drought and power shortage in Bihar, Jan Shakti Printing Press, Patna, 1985.
5. Bihari Lal 'Fatrat', Aina-I Tirhut, ed. by hetukar Jha, Kameshwar Singh Bihar Heritage Series-5, MKSK Foundation, Darbhanga.
6. Comprehensive History of Bihar, Vol. II, Part I and II, K P Jayaswal Institute, Patna, 1987.
7. दिनेश कुमार मिश्र, वन्दिनी महानंदा, समता प्रकाशन, पटना, 1994
8. दिनेश कुमार मिश्र, बाढ़ से त्रस्त एवं सिंचाई से पस्त, पटना, 1990
9. E Ahmed, Soil Erosion in India, Asia Publishing House, Bombay, 1973
10. हवलदार, त्रिपाठी, बिहार की नदियाँ, हिन्दी ग्रंथ अकादमी, पटना, 1977.
11. हेमन्त–रण्जीव, जब नदी बंधी, मधुपुर, 1991
12. ललितेश्वर मल्लिक, कोसी, 1953
13. Prabodh Kumar Jha, Economics of North Bihar
14. नरेन्द्र झा, मिथिलाक आर्थिक विकास, पटना, 2000

15. Pradeep K Bose, "Mobility and Conflict: Social Roots of Caste Violence in Bihar". In Dipankar Gupta (ed), Social Stratification, OUP, Delhi, 1991.
16. R. P Singh, Agricultural Transformation in Kosi Region. North Bihar, India. Deptt of City and Regional Planning (Mimeo), harvard University, 1978.
17. R.R Diwakar (Ed), Bihar Through the Ages, Patna, 2001
18. Satyjit Singh, Taming the Waters the Political Economic of Large Dams in India. OUP, 1997
19. Sharda nanda Choudhary, Geography of Floods in North Bihar, Darbhanga, 1993.
20. Shailendra, K. Jha and Bhanu Jha. The Economic Heritage of Mithila, Novelty and Co. Patna, 1996
21. Surendra Mishra, Irrigation Development and Economic Growth. A case of Study of Bihar Economy, Capital Publishing House, Delhi, 1988
22. Suryakant Shastri, The Flood Legand in Sanskrit Literature, 1950.
23. Tushaar Shah, Groundwater markets and Irrigation Development: Political Economiy and Water Policy, OUP, Delhi, 1993.
24. त्रिपुरारी शरण, बिहार का संकट और उसका हल, पटना 1974
25. S.N. Singh, History of Tirhut, Calcutta.